गली में ज़ीना

यशोदा

गली में एक घर पुराना–सा, जो कि मेरा है। पुराना मैंने इस वजह से कहा है क्योंकि जब से मेरे माँ–बाप यहाँ आए हैं, तब से ये घर वैसा ही बना हुआ है जैसा शुरु में बनाया गया था। इस में अभी तक भी कोई चेन्जिंग नहीं आई है। बाक़ी गली के घरों में तब्दीली हो चुकी है। अब आप सोचेंगे, "ये तब्दीली कैसी?" वो ऐसी, कि हमारे घर को छोड़कर बाक़ी सब घर पक्के बन गए हैं। इतना पुराना होने के बावजूद भी हमारे घर को ज़्यादातर लोग जानते नहीं हैं।

हमारे घर के बाहर खड़े होकर जब नज़र सामने जाती है, तो वहाँ पर एक ज़ीना बना हुआ है, जो कि ऊपर की ओर जा रहा है। उस ज़ीने के आगे दो क़दम का स्पेस छोड़कर, एक बदबूदार नाली बहती है, जो कि चौबीसों घण्टे कूड़े–करकट से भरी रहती है। इतनी गन्दगी के बावजूद भी इस ज़ीने ने अपनी काफ़ी पहचान बनाई है। ज़ीने की पहचान मैंने इस वजह से कहा, कि जब तक यहाँ चार औरतें मजमा लगाकर गुटर–गूँ न करें, तब तक यहाँ की औरतों का दिन नहीं बीतता।

जिस तरह यहाँ के लोगों का दिन बदलावों में गुज़रता है, उसी तरह से ज़ीना अपनी ज़िन्दगी जीता है। सुबह पाँच बजे यहाँ डिब्बों की लाइन लग जाती है, और फिर जिसको भी बैठने की ज़रूरत महसूस होती है, वो यहाँ पेड़ी पर बैठ जाता है, चाहे बूढ़ा हो या जवान। फिर अन्दर से सलमा की अम्मी–अब्बा भी अपने चबूतरे पर आकर बैठ जाते हैं, जो कि पेड़ी के दाईं तरफ़ बना है। फिर शुरु होता है बीड़ियों का धुँआ, स्टोव की आवाज़, और इसमें शामिल हो जाती है ताज़ी–ताज़ी चाय की ख़ुशबू। इन सब में जुड़ जाते हैं रोज़मर्रा के रोचक क़िस्से, जो कि सुबह के मूड को और भी ख़ुशगवार बना देते हैं।

लेकिन ऐसा नहीं है कि यहाँ पर सिर्फ़ एक ही तरह की खिचड़ी पकती है। यहाँ पर समय–समय पर खिचड़ी बदलती रहती है। दोपहर के समय यहाँ औरतों का मजमा होता है, जो कि पेड़ियों पर ऊपर–नीचे बैठकर एक–दूसरे की जुँए देखती हैं। और भी

दो–तीन आस–पास बैठ जाती हैं और कोई भी सामान बेचने वाला आता है, तो लग जाती हैं उसे उल्लू बनाने। और जब वो उल्लू बन जाता है, तो पूरी गली में उनकी बातों की और हँसी की आवाज़ गड़गड़ाहट की तरह गूँज उठती है।

एक दफ़ा मैं और भूरी भाभी अपनी चौखट पर बैठे हुए थे। तभी वहाँ एक माँगने वाला आया और पेड़ी पर बैठ कर बड़बड़ाने लगा, "अल्लाह की इबादत करो, नहीं तो ऊपर वाले से कह कर आग लगवा दूँगा"। बस वो यही बात बड़बड़ा रहा था। भूरी भाभी उसे देखकर कहने लगीं, "ये मस्त हैं। अल्लाह के चाहने वाले हैं। जो ये बोल देते हैं, वही हो जाता है"। और वही हुआ। उस रात बस्ती में भयानक आग लग गई, जिसमें तीन सौ घर राख हो गए।

नल का पानी

राबिया

मैंने तो सिर्फ़ यही सुना था कि हमारी बस्ती में बहुत साल पहले एक भी नल नहीं था। और हर किसी को पानी की दिक्कत होती थी। लेकिन मुझे ज़्यादा कुछ मालूम नहीं था। वो इसलिए मालूम नहीं था क्योंकि उस समय मैं बहुत छोटी थी। मैंने सोचा मैं इस बारे में किसी से बात करूँ। लेकिन मेरे पास इतना समय नहीं था कि मैं किसी से बात करती। लेकिन मेरे पास रात का समय था।

उस वक़्त दस बज रहे थे और सब लोग अपने–अपने घरों में सो रहे थे। तब मैंने सोचा कि मैं अम्मी से बात करती हूँ। मैंने अम्मी से पूछा, "अम्मी, क्या कुछ साल पहले इस बस्ती में कोई नल नहीं थे?"

वो बोलीं, "तुम नल की बात कर रही हो? जब मैं यहाँ आई थी तब यहाँ मैंने किसी का घर ढंग से बना हुआ नहीं देखा था। किसी का घर चारों तरफ़ कपड़े के परदे टाँग कर बना था, और किसी का घर मिट्टी से बना हुआ था। उस समय बस्ती में ज़्यादा आबादी नहीं थी। और यहाँ काफ़ी पेड़ थे। देखने में ये एक जंगल जैसा इलाक़ा था। लेकिन समय के साथ–साथ उन्हें कटवा दिया गया, और इस तरह आबादी बढ़ती रही। उसी के साथ पेड़ भी कम होते रहे। बस्ती में लोगों ने पेड़ों की जगह अपने घर बना

लिए। उन्हें तो ये भी नहीं मालूम था कि पेड़ हमें कितना फ़ायदा पहुँचाते है"।

मैंने अम्मी से पूछा, "अम्मी, अगर बस्ती में नल नहीं थे तो लोग पानी कहाँ से भरते थे?" तो अम्मी ने बताया, "बस्ती के अन्दर नल नहीं थे, लेकिन बस्ती के बाहर नेहरू हिल पार्क के पास दो नल थे, जो एक–दूसरे के क़रीब थे। और वो नल चौबीस घण्टे आते रहते थे"। मैंने अम्मी से फिर पूछा, "अम्मी पूरी बस्ती के लोग नेहरू हिल पार्क में पानी भरने जाते थे?" अम्मी ने कहा, "नहीं, यहाँ पर सिर्फ़ दो ही नल थे। और इन दो नलों से लोगों का गुज़ारा नहीं होता था। इसलिए किसी के पास इतना पानी नहीं था कि वह इंसान खुलकर पानी ख़र्च करे या अपना गुज़ारा करे। नल तो चौबीस घण्टे आता रहता, लेकिन उस नल पर लड़ाई भी होती रहती थी। कोई कहता, 'मेरा नंबर' तो कोई कहता, 'मेरा नंबर'। वहाँ सुबह से लेकर रात तक बहुत भीड़ रहती थी। और उस नल पर इतना शोर रहता था कि वहाँ का चौकीदार भी परेशान हो जाता था। नेहरू हिल पार्क के अन्दर एक चौकवाल लगा हुआ था, वो चौकीदार उससे नल को बंद करता था। और सब निराश होकर अपने–अपने घर चले जाते थे"।

मैंने अम्मी से पूछा, "अम्मी, अगर चौकवाल अंदर से बंद होता था तो कोई आदमी नेहरू हिल पार्क के अन्दर जाकर खोल नहीं सकता था?"

"नहीं, उस चौकवाल में ताला लगा होता था। तो लोग उसे कैसे खोलते?" और अम्मी ने कहा, "मैंने यह भी सुना था कि उस चौकीदार ने उन सब से ये भी कह दिया था, 'अगर किसी ने ताला तोड़ा तो उसके ऊपर केस कर दूँगा'। लोग इस डर के मारे वापस चले जाते थे"।

"अच्छा अम्मी, जिसके घर में एक बूंद भी नहीं होती, वो कहाँ से पानी लाते?" अम्मी ने बताया, "सब लोग पानी भरते थे। हाँ, मैंने तो यही सुना था"। तो मैं सोचने लगी, पहले हमारी बस्ती में पानी की बहुत ही कमी थी। और उन लोगों को पानी भरने के लिए इतनी दूर जाना पड़ता था। इस समय अगर हमें अस्पताल जाना होता है, तो हम रिक्शे में जाते हैं। जबकि ये लोग वहाँ, इतनी दूर से डब्बे और बाल्टी भर कर, चल कर लाते थे। मैंने अम्मी से पूछा, "इस बस्ती में नल कब लगा था?" अम्मी ने बताया, "हमारे यहाँ आने के कुछ साल बाद नल लगा था, जो कि हमारे घर के पीछे था। वो

नल सुबह पाँच बजे आता था और उस नल पर बहुत भीड़ रहती थी। अगर किसी को सुबह पानी भरना होता, तो वो रात में अपना कोई टूटा हुआ बर्तन लगा देती थी। ऐसे ही शाम को जो पानी भरता, वो सुबह अपना टूटा हुआ बर्तन लगाते थे"।
"अम्मी, तुम कहाँ से पानी भरती थीं?"
"मैं भी अपनी बस्ती से पानी भरती थी। मैं तो अपना बड़ा ड्रम नंबर पर लगा देती थी, और ड्रम के बदले में बीस डिब्बे भरती थी"।

"अम्मी, उस समय नल पर बहुत झगड़े होते थे?"
"हाँ, नल पर काफ़ी झगड़े होते रहते थे। और उस समय औरतें तो सीधा एक–दूसरे के बाल पकड़ती थीं और बहुत शोर करती थीं। अगर नल थोड़ा–सा भी हल्का हो जाता, तो लोगों में हड़बड़ाहट हो जाती। कोई कहता, 'मैं भरूँगा', तो कोई कहता, 'मैं भरूँगा'। इस लड़ाई में पानी चला जाता था। और सब लोग नल पर कूड़ा डालते थे। और उसी गंदगी में लोग वहाँ बैठ जाते थे"।
"अम्मी, इस बस्ती में जगह–जगह नल भी तो लगे थे, तो लोग उसी नल पर क्यों जाते थे?"
अम्मी ने कहा, "ये सारे नल नाम के लगे थे। इन में एक बूँद पानी भी नहीं आता था। पानी शुरु–शुरु में आया था, मगर कुछ महीनों बाद वो भी आना बंद हो गया"।

मैंने कहा, "इस समय ज़्यादातर घरों में नल लगे हैं। और पूरी आज़ादी से दिल खोलकर इस्तेमाल करते हैं, और पानी बहुत बरतते हैं। और वो ये नहीं सोचते कि इस बस्ती में हम उस मोड़ से गुज़र चुके हैं जब हमें पानी काफ़ी दूर से लाना पड़ता था। वही लोग इस पानी का इस्तेमाल बहुत देखभाल से करते थे"।

पास की दुकान

नसीम बानो

हमारे घर के पास एक रामदास भाई की दुकान है। वो हिन्दू हैं, लेकिन उनकी बीवी मुसलमान हैं। रामदास भाई की दुकान से हमारा एक अपना–सा रिश्ता है। रामदास भाई की दुकान बहुत अच्छी तरह चलती है। उनकी दुकान की बिक्री बहुत अच्छी होती है। उनकी दुकान पर कभी–कभी इतनी भीड़ हो जाती है कि उन्हें ग्राहकों को सामान

देने का मौक़ा नहीं मिलता। इसलिए दुकान पर वो अपनी बीवी या अपने लड़के, लड़की को खड़ा करवा लिया करते हैं। अगर उनकी दुकान पर हमारे घर का कोई भी सामान लेने चला जाए, तो सबसे पहले, और ग्राहकों से पहले, हमें सौदा देते हैं।

बहुत पहले की बात है। बाजी आई हुई थीं। हमारे घर में खाने तक की परेशानी थी। भाई जान का एक्सीडेन्ट हो गया था। इस वजह से घर का ख़र्चा पूरा नहीं हो पा रहा था। जब बाजी जाने लगीं, तो अम्मी के पास पैसे नहीं थे जो कि बाजी को देतीं। तो अम्मी ने रामदास भाई की दुकान पर जाकर उनसे सौ रुपये लेकर बाजी को दिए।

रामदास भाई आदत से बहुत अच्छे हैं। वो कभी किसी से खिसियाते नहीं हैं। अगर मैं कंप्यूघर आती, और उनकी या उनकी बीवी की निगाह मुझ पर पड़ जाती, तो वो देखकर मुस्कुरा देते। अगर घर में बैठे मैं अपने क़रीबी रिश्तेदारों के बारे में सोचती, तो अम्मी से कहती, "अम्मी, रामदास भाई के घर में लड़ाई नहीं होती"। तो अम्मी ने मुझे बताया कि इन दोनों की शादी यहीं दिल्ली में हुई थी। इन दोनों मियाँ–बीवी के मंडप में फेरे भी पड़े थे, और निकाह भी पढ़ाया गया था। और ये भी बताया, "जब रामदास यहाँ आया था तो एक टोकरी में इमली, मसाले और चीज़ें बच्चों को बेचता था। और शराब भी बहुत पीता था। अब तो इसने शराब पीना बंद कर दिया है, जब से इसके बच्चे हुए हैं। और अब देखो, कितनी बड़ी दुकान कर ली है। और कभी किसी मोहल्ले वाले से लड़ाई नहीं लड़ी है। शराब तो ये अब भी पीता है, लेकिन बहुत कम। इसको दिल की बीमारी है"।

अम्मी ने मुझे रामदास भाई के बारे में बहुत सारी बातें बताईं। और अम्मी ने बताया, "जब शरीफ़ का एक्सीडेंट हो गया था, तो हम इसकी दुकान से उधार लेकर खा रहे थे। कम से कम एक–डेढ़ हज़ार का उधार हो गया था"। फिर मैंने कहा, "अम्मी, और इन्होंने कभी टोका भी नहीं?"

मैं अम्मी को बोली, "रामदास भाई के बच्चे कितने मोटे–मोटे हैं! अगर रानी बाजी छोटी वाली का नाप लेती हैं, तो पेट का भी नाप लेती हैं"। मैंने ये कहा तो सब हँसने लगे।

रामदास भाई की बीवी और बच्चे अपने घर में और गली में बहुत सफ़ाई रखते हैं।

रामदास भाई को हम पर, और हमें उन पर बहुत भरोसा है। जब आग लगी थी, तब हमें रामदास भाई को दो सौ पचास रुपये देने थे। रानी बाजी को पता था कितने देने हैं। लेकिन रामदास भाई को नहीं पता था। जब आग लगने के बाद बाजी पैसे पूछने गईं, तो उन्होंने कहा, "जितने तुझे याद हैं, दे देना"। तो बाजी ने उन्हें दो सौ पचास रुपये दिये।

रामदास भाई ने अपनी लड़की की शादी में हमें भी दावत दी थी। रामदास भाई हम से क्या, बाक़ी ग्राहकों से भी सही बोलते हैं। रामदास भाई गाली भी नहीं बकते। मैंने जब से रामदास भाई की दुकान देखी है, तब से अब तक मोहल्ले वालों से लड़ाई करने वाली कोई बात नहीं देखी। रामदास भाई की दुकान की गली छोटी नहीं है, बड़ी है। उस में ग्राहक आराम से खड़े होकर सौदा ले लेते हैं।

गली में आते–जाते मैं देखती हूँ कि रामदास भाई की दुकान पर ज़्यादा, बहुत ज़्यादा भीड़ होती है। या फिर कभी दुकान पर बच्चे खाने की चीज़ें लेते हुए मिलते हैं।

चाय की दुकान

नीलोफ़र

हमारी तरफ़ एक असलम भाई की दुकान है। उनकी परचून की एक बड़ी–सी दुकान है, और चाय की भी दुकान है। वो चाय की दुकान एक दीवार के सहारे टिकी है। दोनों साइड पर दो छोटी–छोटी दीवारें, और उस पर एक चौड़ा–सा पत्थर है। वहाँ एक गैस पर फ़्राइंगपैन है, जो चाय की पत्ती बार–बार पकने से डार्क ब्राउन कलर का हो गया है। उसमें हमेशा दो चाय की छन्नियाँ पड़ी रहती हैं। उस की डंडी काफ़ी लंबी हैं।

वहीं, गैस के पास, दो मैले–से प्लास्टिक के चीनी और पत्ती के डिब्बे रखे हैं। एक ही चम्मच से उन दोनों का इस्तेमाल किया जाता है। उस पत्थर के नीचे एक नीले कलर की मैली–सी टंकी, और उसके पास कप और गिलास एक टोकरी में रखे हैं। दीवार पर ऊपर की साइड काफ़ी कीलें लगी हैं, जहाँ कप–गिलास में चाय ले जाने की छोटी–बड़ी लोहे के तारों की ट्रे हैं। वहीं चाय की दुकान के पास एक तख़्त बिछा है। लोग गर्मियों में रात में उस तख़्त पर सोते हैं। दिन भर बच्चे उस पर खेलते–कूदते

रहते हैं। अगर कोई औरत उन बच्चों को हटाकर बैठ जाती है, तो कुछ औरतें और आ जाती हैं और शुरु हो जाती हैं।

सुबह के टाइम वो तख़्त एक रेस्टोरेन्ट का काम करता है। सुबह जो भी लोग असलम भाई की दुकान पर चाय पीते हैं, वो उसी तख़्त पर बैठ जाते हैं। बैठे–बैठे चाय के साथ खाने के लिए भी कुछ ले लेते हैं। अगर चाय ख़त्म हो जाती है, तो कई लोग सिगरेट, बीड़ी वग़ैरह भी वहीं बैठकर पीते हैं। ज़्यादातर आदमी ही ऐसे चाय पीते हैं।

ज़्यादा रात हो जाती है तो कभी–कभार लड़के भी बैठ जाते हैं। जब सर्दियाँ होती हैं तो औरतें अपने छोटे–छोटे बच्चों को तैयार करके, मेरा मतलब उनके कपड़े बदलकर, पाउडर लगाकर, उन्हें मोटे–से गद्दे में लपेटकर तख़्त पर धूप के लिए लिटा देती हैं।

असलम भाई दोनों दुकानें एक साथ चलाते हैं। परचून की दुकान में खड़े होकर अपनी तीन छोटी लड़कियों से कहते रहते हैं, "जाओ, वहाँ से कप–गिलास ले आओ, उस कारख़ाने से केतली ले आओ"। अगर उनकी लड़कियाँ उनकी बात नहीं सुनतीं तो वो उन्हें मारते हैं। इसलिए उनकी लड़कियाँ असलम भाई की एक आवाज़ पर दौड़ती हैं। एक–दूसरे को पिटवाना हो, तो एक–दूसरे की शिकायत करती हैं, "बाबू, देखो शबाना कप–गिलास लेने नहीं जा रही"।

उस दुकान की चाय, मुझे नहीं पता कहाँ–कहाँ जाती होगी। जब चाय कारख़ाने में जाती है तो बड़ी केतली में, और बहुत सारे कप जाते हैं। अगर घरों में जाती है, तो छोटी केतली में जाती है। अकसर चाय उनकी बीवी या उनकी बड़ी लड़की बहारा बनाती हैं। पर देने के लिए छोटी तीन लड़कियाँ ही जाती हैं। जब उनकी लड़कियाँ नहीं होतीं, स्कूल या कहीं गई होती हैं, तो उनकी बीवी जाती है।

जिस दीवार के साथ उनकी चाय की दुकान है, उस दीवार वाले घर में किरायदार रहते हैं। एक दिन उस घर का मालिक आया। यहाँ का घर उन्होंने किराए पर दिया है, जिससे उन्हें हज़ार–बारह सौ रुपए मिल जाते हैं। उन्होंने आकर असलम भाई से कहा, "मेरी दीवार पर यह कब्ज़ा कैसा?" असलम भाई कुछ बोल नहीं पाए। मालिक

ने चाय का सामान हटवाया और पत्थर हटाकर वो दो दीवारें तोड़ दीं। और असलम से कहकर गए, "अब मत बनाना"।

अब असलम भाई की चाय की मशीन आ गई है। जिसे उन्होंने अपने घर के सामने रख लिया है। इससे उन्हें घर में आने–जाने में परेशानी होती है। और जो उस घर में रहते हैं, जहाँ दुकान पहले थी, उन्हें काफ़ी ख़ुशी हुई है। क्योंकि अब वो अपने घर के बाहर का कुछ हिस्सा इस्तेमाल कर सकते हैं। बाहर वो रोटी, सब्ज़ी पकाते हैं, फिर स्टोव उठाकर अंदर रख लेते हैं। उस दीवार पर, उन्हीं कीलों पर उन्होंने बॉल, बाजे, बच्चों के खिलौनों की पॉलीथीन टाँग रखी हैं। नीचे दीवार से लगकर पत्थर पर उनके घर के पानी के डिब्बे रखे रहते हैं। पहले उस पत्थर पर चढ़–चढ़कर बच्चे कूदते थे।

हमारे घर में भी कभी–कभार चाय वहीं असलम भाई की दुकान से आती है। चाय की दुकान वहाँ से हटने से अब वहाँ काफ़ी सोफ़ता लगता है।

टेलिफ़ोन

महरुन्निसा

टेलिफ़ोन तो अब आम हो गया है। हर किसी के घर में है। मेरी मामी के यहाँ भी टेलिफ़ोन है। पर वो कभी–कभी ख़राब हो जाता है। मेरी मामी के घर में टेलिफ़ोन बदलते रहते हैं। अभी कुछ दिन पहले उनका लाल रंग का टेलिफ़ोन आया था। उसमें यह ख़राबी थी कि अगर कोई फ़ोन आता, तो यहाँ की आवाज़ दूसरी लाइन पर जाती, पर उसकी आवाज़ हमारे पास नहीं आती। मेरी मामी के यहाँ टेलिफ़ोन वाला आया। उसने सबसे पुराना वाला टेलिफ़ोन लगा दिया। उसका रंग बुरा लग रहा था।

एक दिन की बात है। मुझे स्कूल की तरफ़ से कहीं जाना था। मैंने अपनी सहेली को फ़ोन करना था, टाईम पूछने के लिए। मैंने मामी से पूछा, "मैं एक फ़ोन कर सकती हूँ?" मामी ने कहा, "कर सकती हो"। मैं फ़ोन करने चली गई। फ़ोन का नंबर मिलाकर मैंने हैलो ही कहा था कि मामू आ गए। मैंने फ़ोन झट से रख दिया, यह कह कर कि बाद मैं करूँगी। मामू के घर आते ही मैं चली गई। मेरा मुँह बन गया। बाजी ने मेरा

मुँह फूला देखकर कहा, "क्या हुआ, नन्हीं?" मैंने कहा, "अगर हमारे यहाँ फ़ोन होता तो अच्छी तरह बात कर लेती"। वो बोली, "अच्छा, तो मामू आ गए थे?" मैंने कहा, "हाँ, जैसे ही मैंने हैलो कहा, वैसे ही मामू आ गए और मैं चली आई"। मुझ से मामू के सामने बात नहीं की जाती। मैंने बाजी से कहा, "बाजी फ़ोन लगवा लो। अम्मी से कहो कि फ़ोन लगवा लें"। पर बाजी ने जब अम्मी से पूछा तो अम्मी ने कहा, "कौन से रिश्तेदार बैठे हैं जो हमें फ़ोन करेंगे?"

कभी–कभी तो ऐसा होता था कि जब मैं मामी के घर जाती थी, वो नमाज़ पढ़ रही होती थीं। जब फ़ोन आता, तो मैं उठाने जाती। तो मामी की लड़की कहती, "तू रहने दे, मैं उठाने जाती हूँ"। उसके यह कहते ही मैं पीछे हट जाती, और वो फ़ोन उठाती। मैं उसके फ़ोन रखने का इन्तज़ार करती, फिर कहती, "हिना, मैं नहीं उठा सकती थी फ़ोन?" तो वो कहती, "मेरी सहेली का फ़ोन था, इसलिए मैंने उठाया"। मैं कहती, "तुझे पता था कि तेरी सहेली का फ़ोन आया है?" इस पर वो एकदम चुप हो जाती।

ट्रांसफ़ॉर्मर

नसीम बानो

मैं अपने घर की एक दीवार से लगकर बैठी हूँ। मैंने घर की हर चीज़ पर, और सब तरफ़ नज़र दौड़ाई। मेरे कुछ समझ में नहीं आया। मैंने अपनी नज़र एक बार और दौड़ाई। तभी एकदम लाइट हल्की हो गई, जिससे कि पंखा हल्का चलने लगा और घर में अंधेरा–सा हो गया। भाई ट्रांसफ़ॉर्मर के पास दीवार से लगकर बैठे थे। उन्होंने ट्रांसफ़ॉर्मर की तरफ़ हाथ बढ़ाकर वोल्टेज बढ़ाई, जिससे की लाइट तेज़ हो गई और पंखा तेज़ चलने लगा। अचानक मेरी नज़र ट्रांसफ़ॉर्मर पर पड़ी। मैंने उसे ख़ूब ग़ौर से देखा। तभी मुझे जिस दिन ट्रांसफ़ॉर्मर आया था, तब की बात याद आने लगी।

हमारे घर में ट्रांसफ़ॉर्मर को आए हुए छः साल हो गए हैं। वो हरे रंग का था। ट्रांसफ़ॉर्मर ढाई हज़ार रुपए का आया था। ये ट्रांसफ़ॉर्मर चाचा के पैसों का आया था। सम्बल में हमारा एक घर था। चाचा उसे पच्चीस हज़ार रुपए का बेचकर आए थे। जिससे कुछ

रुपए बाजी की शादी में लगे, और जो बाक़ी ढाई हज़ार रुपए बचे, उसका ट्रांसफ़ॉर्मर आया। एक हमारे चाचा की याद की वही चीज़ है। जब घर कच्चा था, तो ट्रांसफ़ॉर्मर उसी जगह पर रखा था जहाँ अब रखा है। यानी कि, घर पक्का बनने के बाद, अब भी ये पहले जहाँ रखा था, उसी की सीध में, थोड़ा ऊपर रखा हुआ है। जिससे कि इस की उस जगह से हिलने की न तो उम्मीद थी, और न ही उम्मीद है।

हमारे बीच क्या बहता है?

अज़रा तबस्सुम

रविवार की रात साढ़े नौ बजे मैं अपने घर में रखी पानी की टंकी के पास बैठी ठंडे पानी में गर्म पानी मिला रही थी। मैं उस समय वहाँ अकेली ही थी। मेरे दिमाग़ में एक दोस्त के साथ हुई बातें आ रहीं थीं। मैंने पानी को देखते हुए अपना सिर ज़मीन की तरफ़ झुकाया और लगी सिर धोने। फिर मेरे दिमाग़ में एक आवाज़ आई, "पानी को देखकर कैसा महसूस होता है?"

दूसरी आवाज़, "पानी को देखकर मुझे बहुत ख़ुशी महसूस होती है"। मेरे कानों को ये आवाज़ें सुनने के साथ–साथ हाथों को सिर धोने का काम भी करना था। फिर एक अजीब–सी आवाज़ आई, "अज़रा, पानी से ख़ुशी महसूस होती है का क्या मतलब? सोचो तुम बाहर जाने के लिए तैयार हुई हो और तुम्हें बरमे से पानी लाना है। बाल्टी ऊपर तक भरी है और उठाने पर पानी छलक सकता है। तब तुम्हें पानी देख कर ख़ुशी महसूस होगी?"

ये आवाज़ मेरे दोस्त की थी जो उस समय मेरी अंदरूनी आवाज़ बन गई थी। मैं अपने ही सवाल का जवाब नहीं दे पा रही थी। अपनी भवें मिलाईं और अपने बालों को कस के रगड़ने लगी। बात में दम था। जब सर्दी का मौसम होता है तो पानी पीने को भी मन नहीं करता। बरसात में मैं ज़्यादा देर पानी में भीग जाती हूँ तो अम्मी भी चिल्लती हैं, और मुझे भी खुजली होने लगती है।

मैं सिर धो चुकी, खड़ी हुई और लाल चैक के मलमल के दुपट्टे से अपने बालों को

लपेटते हुए ज़ीने से चढ़ती हुई ऊपर आई। ऊपर जाते ही लगा नीचे के टीवी की आवाज़ तो जैसे पैदा ही नहीं हुई थी, या फिर उसने गाड़ियों की आवाज़ का रूप ले लिया था। सड़क मेरे घर के सामने ही थी, इसलिए इस समय गाड़ियों की आवाज़ ज़्यादा तेज़ थी। मैं ऊपर पहुँच कर, टीवी पर एक झलक मारते ही ऊपर आसमान की तरफ़ देखने लगी।

फिर मेरी नज़र किचन से बाहर आती हुई नाली पर पड़ी। मैंने देखा मेरी छोटी बहन बुशरा रात के झूठे बर्तन किचन में बैठी धो रही थी। मैंने सोचा क्यों न तख़्त पर बैठ कर नाली से जाता हुआ पानी देखा जाए। मैं अपने हाथों से बालों का जूड़ा पकड़ते हुए दीवार पर से तख़्त पर कूदी और जाकर तख़्त के दूसरे कोने पर बैठ गई। मैं किचन से आती हुए नाली के बीच के पानी को देख रही थी। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि पानी को किसका रूप दे कर देखूँ। फिर मैंने सोचा कि हम नाली बनवाते हैं ताकि नाली घर के पानी को बिना बिखेरे ही गटर की ओर जाने दे। और अगर नाली बीच में टूट जाती है तो पानी निकलने लगता है, जो दूसरों की परेशानी का सबब और लड़ाईयों की वजह बन जाती है। नाली में अगर छोटे–छोटे पत्थर पड़े होते हैं तो पानी को उसमें से जाने में इतनी दिक्कत नहीं होती। लेकिन अगर ज़्यादा बड़ा पत्थर होता है तो पानी वहीं अटकने लगता है, और फिर उसकी सफ़ाई के लिए काफ़ी जूझना पड़ता है, तो कभी सफ़ाई करने में ज़्यादा दिक्कत नहीं होती।

नाली में पानी बहता है, पर हम लोगों के बीच क्या बहता है? हम लोग अलग–अलग सोचों के बावजूद एक–दूसरे की सोचों में गुम होने और घूमने की कोशिश करते हैं। और अगर जाने का रास्ता नहीं मिलता, तो लग जाते हैं रास्ते में पड़े पत्थरों को हटाने की कोशिश में...

जेब–कतरे

राजू सिंह मल्याल

एक बार की बात है। मैं बस में सफ़र कर रहा था। बस में लगभग तीस–पैंतीस लोग होंगे। मैं बस के बिलकुल बीच वाली सीट पर बैठा था। मुझे खानपुर से महरौली जाना

था। मेरे पास चार रुपए की टिकट थी, जो मैंने बस कंडेक्टर से ली थी।

अचानक बस एक सड़क के किनारे रोकी हुई थी। दो–तीन आदमी बस में चढ़े – दो आगे वाले गेट से, और एक पीछे वाले गेट से। बस में कुछ लोग घबराए हुए लग रहे थे। तभी उन तीन आदमियों ने उनसे टिकट के लिए पूछा। तब मैं समझा कि ये लोग टिकट चैकर हैं। बस में सफ़र करते लोगों में से कोई तो कह रहा था, "मेरे पास टिकट नहीं है" और कोई कह रहा था, "मैं तो अभी–अभी बस में चढ़ा हूँ"। फिर उन लोगों को बस में से उतारा गया, उन्हें एक बाहर खड़ी वैन में बिठा दिया। उस वैन में नीले कलर से डीटीसी बस का चिन्ह बना हुआ था, और वैन सफ़ेद कलर की थी। वैन चल पड़ी, और फिर हमारी बस भी।

बस लाडो सराय के बस स्टैंड पर पहुँची। बस में तीन लड़के चढ़े जिनकी उम्र लगभग उन्नीस–बीस साल होगी। शक्ल से तो वे लोग बदमाश–टाइप के लग रहे थे। बड़े–बड़े बाल, साँवला चेहरा, बड़ी–बड़ी आँखें। मेरे बगल में बैठे आदमी ने गुस्से में धीमी–सी आवाज़ में कहा, "आ गए जेब–कतरे"। वे तीनों बैठ गए, दो पीछे–वाली सीट पर, और एक मेरे आगे–वाली सीट पर।

इतने में पीछे से हल्ला मचा। एक आदमी चिल्लाया, "मेरे पैसे लेकर भाग रहा है!" लड़का चलती बस से कूद ही रहा था कि उसे एक आदमी ने पकड़ लिया। पहले तो लोगों ने उससे पैसे माँगे, फिर उसकी पिटाई करने लगे। बस में जितने भी लोग बैठे थे, सब ने उसकी पिटाई की। मैं अपनी सीट पर बैठा–बैठा तमाशा देख रहा था और मन ही मन हँस रहा था। मैं उस आदमी पर हँस रहा था जो मेरे साथ बैठा हुआ था। मैं सोच रहा था, अभी तो यह आदमी दबी आवाज़ में कह रहा था कि जेब–कतरे आ गए, और अब उसमें इतनी ताक़त आ गई कि वह उस जेब–कतरे को मारने के लिए चल पड़ा"। बस रुकवाकर उस जेब–कतरे को वहीं रोड पर धक्का दे दिया।

आँखों देखा हादसा

बॉबी ख़ान

संडे का दिन था। टाइम एक बज के तीस मिनट हो रहे थे। मैं बैठी स्टोव पर रोटी बना रही थी। जब मैं रोटी बना चुकी, तो दो बज रहे थे। मैं बरमे का ठंडा पानी लेने शबनम के घर गई। उसके घर की छत पर चार–पाँच बच्चे खेल रहे थे। उनमें से दो लड़कियाँ रस्सी कूद रही थीं। घर की दीवार के बराबर में लईक बकरे वाले का घर है। वहाँ दो आदमी बकरे लेने आए हुए थे।

जो लड़कियाँ छत पर खेल रही थीं, उन्हीं में से एक लड़की नीचे गिर गई। वो लड़की नीचे खड़े आदमी पर गिर कर नीचे ज़मीन पर गिरी। वो आदमी इधर–उधर देखने लगा। मैं पानी का भगोना लिए शबनम के घर पर बैठी बातें कर रही थी। मुझे लगा कोई आवाज़ दे रहा है। आवाज़ किसे दे रहा है, ये सुनाई नहीं दिया। मैं जल्दी से बाहर आई तो उस आदमी ने कहा, "ये बच्ची ऊपर से गिर गई"। मैंने उस लड़की को देखा तो मुझे लगा कि वो हमारे पड़ोस के चव्वा की लड़की अमरीन है। ये देख कर मैंने उसे जल्दी से गोद में उठा लिया। मैंने उस का मुँह देखा। बहुत ख़ून बह रहा था। ख़ून बहता देख कर मैं डर–सी गई। बिना कुछ सोचे–समझे ज़ोर–ज़ोर से आवाज़ें लगाने लगी, "मामू, अमरीन गिर गई, मामू अमरीन गिर गई!" आवाज़ लगाने पर भी कोई नहीं आया। फिर मैंने शबनम को आवाज़ लगाई। मेरी आवाज़ सुनते ही शबनम बाहर निकल कर आई। फिर वो जल्दी से मामू के घर गई ओर उन्हें बुला कर लाई।

इतने में वो आदमी, जिस पर बच्ची गिरी थी, बेहोश हो गया।

सब ने क्या सोचा, लिखाः

अज़रा तबस्सुम

बॉबी का लेख सुनते समय मेरे दिमाग़ में मेरी बहन की ननद का बेटा घूम रहा था। अभी पिछले ही साल की बात है...

पंद्रह अगस्त के दिन हर बच्चा चाहता है कि वो छत पर ही रहे। मेरी बाजी की ननद

का नाम शफ़त है। शफ़त बाजी एक पाँच–मंज़िला बिल्डिंग में फ़्लैट में रहती हैं। बाजी चौथी मंज़िल पर रहती हैं। एक दिन वो किचन में खाना बना रही थीं। सारे बच्चे छत पर थे। कुछ खेल रहे थे, कुछ पतंग उड़ा रहे थे। बाजी का सबसे बड़ा बेटा बारह साल का है, सबसे छोटा बेटा तीन साल का। तीन साल का नावेद भी छत पर बाक़ी बच्चों के साथ था। न जाने कैसे नावेद छत पर से नीचे गिर गया। छज्जे का दरवाज़ा खुला हुआ था। शफ़त बाजी को कुछ गिरता हुआ महसूस हुआ। उन्हें लगा शायद कोई कपड़ा छत पर से नीचे गिर गया होगा। उन्होंने सोचा, "देख लूँ कौन–सा कपड़ा है"। उन्होंने झाँक कर देखा तो एक मिनट के लिए उनकी आवाज़ उनके अंदर ही रह गई। फिर वो एकदम चिल्ला कर बोलीं, "मेरा बच्चा! मेरा बच्चा! कोई मेरे बच्चे को उठाओ!" कहीं से एक आदमी भागकर आया और जल्दी से नावेद को गोद में लेकर हॉस्पिटल की ओर भागा। शफ़त बाजी बेख़ुद–सी होकर नीचे भागी हुई आईं। नीचे ही उनके पति की दुकान है। उन्होंने वहाँ खड़े होकर बहुत ज़ोर की आवाज़ निकाल कर कहा, "नदीम, मेरा नावेद!" फिर सब भागे हुए हॉस्पिटल गए। वहाँ जाकर पता चला कि नावेद बहुत सारी चीज़ों से टकराकर नीचे गिरा था। उसे चोट भी बहुत आई थी, सिर पीछे से फट चुका था। काफ़ी ख़ून भी बह चुका था। वो तो वहीं मर चुका था। ये सुनने के बाद शफ़त बाजी की हालत बहुत ख़राब हो गई। उन्हें संभालना मुश्किल हो गया।

अब वो अपने बच्चों को कभी छत पर नहीं भेजतीं। भेजती हैं, तो ख़ुद भी जाती हैं उनके साथ।

सुल्ताना

जब मैं उस बच्ची को उसके घर देखने जा रही थी तो मेरे दिल में एक अजीब–सी हलचल मची हुई थी। मेरी आँखों के सामने उसके गिरने की छवि, और कानों में उसकी चीख की आवाज़ बार–बार आ रही थी। अगर हम कोई ऐसा हादसा देखते हैं जिस में हलचल हो, डर हो, तो हम उस हादसे को जान–बूझ कर अपनी आँखों के सामने लाना चाहते हैं। उस समय मैं उस बात को कुछ ज़्यादा ही अपने दिमाग़ में ला रही थी। इसलिए मेरे सामने उसकी तस्वीर आ रही थी। जब मैं उसके पास, उसके घर गई, तो मैंने उसके आसपास बैठे इंसानों से दबी आवाज़ में पूछा, "अब इसकी तबीयत कैसी है? और डॉक्टर ने क्या कहा? इसके कहाँ–कहाँ पर चोट आई है?" जब मैंने उसके चेहरे पर पट्टी बंधी हुई देखी, तो मैंने अपने मन ही मन सोचा, "शायद इसके

कई टाँके आए होंगे, या गहरी चोट आई होगी"। मैं ये सब सोच रही थी, पर मैं ये बात उसके घरवालों से पूछ नहीं पाई। जब मैंने उसके चेहरे को ग़ौर से देखा, तो न जाने क्यों मेरे दिल में मीठा–सा दर्द महसूस होने लगा और मुझे अपने मन में रोना आने लगा। मुझे उसे देख कर ये महसूस हो रहा था कि बताओ, अच्छी–खासी लड़की के चेहरे का क्या नाश हो गया। अगर किसी बड़े–बूढ़े या बच्चे का आगे का एक दाँत टूटता है, तब भी कितना बुरा लगता है। इस छोटी–सी बच्ची के तो आगे के सारे दाँत टूट गए। पट्टी खुलने के बाद ही पता चलेगा कि इसके चेहरे में क्या फ़र्क़ आएगा।

सूरज राय

माहौल, गति, सोच। गति इस लेख में कुछ ऐसी है, जो हल्की महसूस होती है। इस लेख में कुछ ऐसा हुआ है जो इसको एक अट्रैक्शन देता है। जिस तरह गाड़ी के चलने से उसके पास पड़ी पिन्नी या कागज़ कुछ देर के लिए उसके साथ चल देते हैं, उसी तरह का खिँचाव इस लेख में है। चाहे वो कम हो या ज़्यादा। क्योंकि माहौल सोच को गति दे रहा है, और सोच माहौल में धुंध और भारीपन ला रही है।

यशोदा

बात तब की है जब मैं बहुत छोटी थी। तब का एक हादसा मुझे बहुत याद आता है। मैं अपनी फ़्रैंड के साथ छत पर खेल रही थी। तभी अचानक मेरा छत पर से पैर फिसल गया और मैं एक हट्टे–कट्टे आदमी के सिर से टकराती हुई ज़मीन पर आ गिरी। गिरने के बाद मुझे होश नहीं रहा कि मैं कहाँ हूँ। जन्नत में, या ज़मीन पर? जब मुझे होश आया तो मैंने अपने आप को इमरजेंसी के वॉर्ड नंबर चौदह में पाया। वहाँ की दवाइयों की स्मैल तब तक मेरे अंदर तक समा चुकी थी। मेरे अपने और मेरे जानने वाले मुझे चारों तरफ़ से घेरे हुए थे। मेरे होश में आते ही जैसे उनमें किसी ने जान फूँक दी थी। अम्मी की आँखों में आँसू की नमी अभी तक बाक़ी थी। अम्मी मुझे देखते ही बोलीं, "कैसी है मेरी बच्ची?" मैंने अपने मुँह की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "मेरे मसूड़ों में बहुत तकलीफ़ है"। लेकिन अम्मी के प्यार भरे हाथों की ठंडी–ठंडी नमी मुझे दर्द के अहसास से दूर हटाए हुए थी। अम्मी मुझे बाँहों में समेटे हुए बोलीं, "अब तू होश में आ गई है न, अब सब ठीक हो जाएगा"। चाचा मेरे माथे पर प्यार से हाथ फेर कर बाहर चले गए। और हमारे घर के आसपास के दो–तीन पड़ोसी मुझे तंदरुस्ती की

दुआएँ देते हुए बाहर बरामदे में जा बैठे। मैं घण्टों ऐसे ही अपनी अम्मी से लिपटी रही, और उनकी आँखों में ममता की नमी को निहारती रही। आज भी जब मैं अपनी अम्मी की गुस्से वाली आँखें देखती हूँ, तो मेरे दिमाग़ में वो प्यार भरी आँखें घूम जाती हैं जो उस हादसे से उभर कर बाहर आईं थीं।

मार्शल आर्ट्स

कुल्विन्दर कौर

उस दिन घर पर कुछ मेहमान आने वाले थे। वो लोग दीदी के रिश्ते के सिलसिले में घर पर आ रहे थे। मैं भी कंप्यूघर से जल्दी ही घर के लिए निकल पड़ी। जैसे ही मैं बस स्टॉप पर पहुँची, कुछ आवाज़ें आने लगीं – "तू गाड़ी चला और हमें विराट उतार"। कुछ आदमी एक ऑटो–रिक्शा चालक पर विराट जाने के लिए बल प्रयोग कर रहे थे। वह ड्राईवर विराट जाने से इन्कार कर रहा था। उन आदमियों ने ड्राईवर को बुरी तरह पीटा और उसे रिक्शे में बैठा कर उसके पेट पर एक लम्बा–सा चाकू टेक दिया।

मैं रिक्शे से कुछ ही दूरी पर खड़ी यह दृश्य देख रही थी। मेरे मन में प्रश्न उठने लगे कि मुझे उस ड्राईवर की मदद करनी चाहिए (अथवा नहीं)। मैं एक मार्शल आर्ट्स की छात्रा हूँ। मैं सदा स्वयं, निर्बल तथा औरतों की रक्षा के लिए अपनी कला का प्रयोग करने पर नियमबद्ध हूँ। मैं इन प्रश्नों से उभर ही रही थी कि मेरी नज़र अपने चारों ओर गई। लोग मेरे स्थान से कहीं दूर खड़े थे और उन्हीं में से एक चेहरा मुझे दूर हटने के लिए कह रहा था। तभी एक ऑटो वहाँ रुका। मैं कुछ और न सोच सकी और तुरंत दूसरे ऑटो में बैठकर घर के लिए रवाना हो गई। किन्तु रास्ते–बीच की उस घटना को लेकर कई प्रश्न मेरे मन में उठने लगे। मैं घर पहुँच गई और मेहमानों के स्वागत की तैयारी में लग गई।